ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2018; 4(1): 43-46
www.allresearchjournal.com
Received: 21-11-2017
Accepted: 25-12-2017

रजनीगंधा
शोधार्थी विष्वविद्यालय, संगीत एवं नाट्य विभाग, ल.ना. मिथिला विष्वविद्यालय, दरभंगाा, बिहार, भारत।

Corresponding Author:
रजनीगंधा
शोधार्थी विष्वविद्यालय, संगीत एवं नाट्य विभाग, ल.ना. मिथिला विष्वविद्यालय, दरभंगाा, बिहार, भारत।

मध्यकालीन मिथिला के संगीत ग्रंथ का अध्ययन

रजनीगंधा

सारांश
मध्यकाल में मिथिला में बहुत से मैथिल कवि हुए थे जिनकी किर्ति भारतीय प्रायद्वीप में प्रसिद्ध हुए थे। इसी काल में बहुत से कवि जैसे विद्यापति, भोज सोमेष्वर, महर्षि याज्ञवल्क, पं. चैतन्य देसाई आदि कवि हुए। इस काल को स्वर्ण काल कहा जाता है। भोज सोमेष्वर द्वारा रचित भरत भाष्य को दो खण्डों में बाँटा गया जिनके प्रथम खण्ड में पाँच अध्याय एवं द्वितीय खण्ड में दो अध्याय है। प्रथ्य लेखक ने वर्णरत्नाकर ग्रंथ के अध्याय को कल्लोल में बाँटा है। जिनके प्रथम कल्लोल में राजा रानी एवं नगर व्यवस्था का वर्णन किया है। इसके दुसरे कल्लोल में नायक (राजा) एवं उनके प्रकार तथा लक्षणों का उल्लेख किया है। तिसरे कल्लोल में राजा के आम दरबार एवं उनके पदाधिकारी का वर्णन किया है। चतुर्थ कल्लोल में विभिन्न ऋतु एवं उनमें होने वाली प्राकृतिक परिणाम का वर्णन किया गया है। पंचम कल्लोल में युद्ध हेतु घोड़ा तैयार करना प्रषिक्षण आदि, प्रषिक्षण विधि का वर्णन किया है। षष्ठ कल्लोल में विविध विद्या एवं कलाओं का ज्ञान रखने वाली जाती भाँट का वर्णन है। सप्तम कल्लोल में तंत्र साधना एवं अष्टम में राजाओं के कुल का वर्णन है।

प्रस्तावना
मिथिला के राजा नान्यदेव ने मिथिला पर शासन 1097ई. से 1133 ई. तक किए। 950ई. से 1250 ई. तक का युग भारतीय संगीत का स्वर्ण युग था। इस युग में इनके अलावा भोज सोमेष्वर आदि संगीत शास्त्रकार थे। इन्होंने सरस्वती हे दयालंकार लिखे थे लेकिन बाद में भरत भाष्य नाम से प्रसिद्ध है। भरत भाष्य में संगीत का विवेचन विस्तार से दिया गया है इनकी भाषा सुगम तथा मधुर है। भरत भाष्य का वर्तमान स्वरूप जो उपलब्ध है जिसका अनुवाद 1961 में प. चैतन्य देसाई के द्वारा हुआ था। इसके दो खण्ड है। प्रथम खण्ड में पाँच अध्याय हैं। 1. उद्देषाध्याय, 2. षिक्षाअध्याय, 3. श्रुत्या अध्याय, 4. मुर्च्छना अध्याय, 5. अलंकाराध्याय। इसके प्रथम अध्याय में संगीत कला का उद्देष्य एवं इसके महत्व को बताया गया है।
महर्षि याज्ञवल्कय के अनुसार वीणा वादन में प्रवीण श्रुति स्वर पर सिद्धि प्राप्त करने वाला तलाज्ञ व्यक्ति बना प्रयत्न के ही मोक्ष मार्ग को प्राप्त करता है। द्वितीय गुण दोष पर विचार करते हुए कंठ से उत्पन्न स्वरों का स्थान यानी वास्तविक शब्द उच्चारण (षब्दोच्चारण) के महत्त्व को बताया गया है। तिसरा अध्याय में संपादक ने स्वरों को वर्ण जाती उनके देवता आदि से संबंधित पदों को संग्रहित किया है। चतुर्थअध्याय में मुर्च्छनाओं के नाम तथा उनकी उत्पति को विस्तार पूर्वक बताया है। पंचम अध्याय में संगीत के वास्ते अंलंकार के महत्त्व को बताया गया है–[1]
दुसरे खंड में दो अध्याय है। 1. छठा जात्या अध्याय 2. सातवाँ रागाध्याय है। इसके छठे अध्याय में जातियों के स्वर सन्निवेष दिया गया है।
पुनः स्वरलिपि के साथ जातियों के साथ पद दिए गए हैं। फिर स्वरों के द्वारा उपन्यास विन्यास इत्यादि खण्डों का विवेचन दिया गया है।
सातवाँ अध्याय में प्रथम प्रकरण में शुद्ध भिन्न आदि गीतियों का उल्लेख है रागों के गाने का समय बताया गया है। दुसरे प्रकरण में राग भाग विभेद का वर्णन है। तिसरे प्रकरण में ग्राम राग भाषा ईत्यादि रागों का विवेचन किया गया है। वर्तमान संगीत व्यवस्था के अनुसार वादि और सम्वादी स्वर का निर्देष देते हुए षडज को ही ग्रह और अंष स्वर कहा गया है। षष्ठ अध्याय में जातीयों से उत्पन्न होने वाली राग जिनका गांधर्व संगीत में उपयोग है।
सप्तम अध्याय में गीतियों के भेद प्रकार गायन समय तथा राग भाषा के भेद पर विचार किया गया है। आचार्यो के मत ग्राम रागों से उत्पन्न ग्राम राग उनके स्वर उत्पन्न स्वर लक्षण आदि दिए गए हैं।

राग तरंगंणी लोचन शर्मा के द्वारा लिखि ग्रंथ है इसमें मिथिला के संगीत परंपरा को सर्व सुलभ बनाने का महत्वपूर्ण प्रयास मध्य काल में किया गया था। प्रत्येक राग का उदाहरण एवं स्वरूप इन्होंनें मैथिली भाषा में किए है। इसमें कुल उपलब्ध गीत की सं. 103 है। जिसमें 53 गीत केवल विद्यापति के हैं। मिथिला के मध्यकाल में संगीत के प्रचार पर इस ग्रंथ में सविस्तार वर्णन किया गया है। इस ग्रंथ में पाँच तरंग है। इसके संगीत शास्त्र का संक्षिप्त विवेचन है।

पहला तरंग : इसके लेखक ने परंपरानुसार ईष्वर आराधना मंगलाचरण की है। इसके बाद आश्रवक्ता के वंष का परिचय का क्रम में मिथिला के राजा महेष ठाकुर, शुभंकर ठाकुर, रानी सुन्दर ठाकुर आदि राजाओं का यथा वर्णन है। इस तरंग में पुरुष रागों के स्वरूप का वर्णन किया है।

दुसरे तरंग में स्त्री रागणियों के स्वरूप का वर्णन विस्तार से किया है। तिसरा तरंग में प्रचलित छतीस रागों के भेद के साथ छंदो का नियम और उसका मैथली भाषामय गीत के साथ उदाहरण प्रस्तुत किया गया है। चतुर्थ तरंग में में मिथिला में प्रचलित नौ संकीर्ण रागों का भेद सहित छंद के नियम के साथ मैथिल भाषा गीत में उदाहरण प्रस्तुत किया गया है। पंचम तरंग में स्वर प्रकरण राग संस्थिति नायिका भेद के साथ नायक, नायिका विस्तृत निरूपण गीत के भाव के अनुसार किया गया है। राग के लक्षण का वर्णन करते हुए कवि लोचन ने लिखा है जो सबों के चित को प्रसन्न कर दे उसे रागबध कहा जाता है ताल लय आदि में युक्त स्वर जिसमें चित को प्रसन्न करने की क्षमता को राग कहा जाएगा।

इस ग्रंथ में व्रजभाषा का बहुलता से प्रयोग हुआ है। साथ ही तालों की गति आदि का प्रदर्षन अधिकतर इसी भाषा में किया गया है। रागों के उदाहरण में जितने भी पद दिए गए हैं सभी मैथिली में हैं जो तृतीय तथा चतुर्थ तरंग में है। राग तरंगणी ग्रंथ राजा नरपति ठाकुर की आज्ञा से तैयार कि गई थी। यह ग्रंथ संगीत विषय के आधार पर लिखा गया है। पां. लोचन ने रागतरंगणी को पाँच अध्यायों में बाँटा है जिसे इन्होंने तरंग कहा है। इन्होंने राग रागिनी पद्धति के आधार पर ही तत्कालीन रागों का वर्गीकरण किया है। जिसके अंतर्गत छह पुरूष राग और उनकी तीस और छतीस रागिनी का विधान है। मध्यकालीन भारतीय संगीत के चार आचार्य हुए, चारों में यह समानता थी कि प्रत्येक की पुरुष राग की सं. एवं नाम प्रायः समान थे परंतु उनकी रागनियों की सं. में भिन्नता थी। जिसमें दो मत के अनुसार प्रत्येक की पाँच–पाँच रागनियाँ थी आठ आठ पुत्र थे और दो मतों के अनुसार पूत्र सं. आठ–आठ की थी। अर्थात प्रत्येक पुरुष राग के आठ आठ पूत्र थे एवं इन दो पद्धतियों में रागणियों का निर्धारण छह छह था। लोचन ने राग भैरव को प्रथम राग माना है, इन्होंने इस राग को भगवान षिव मानतें हुए षिवा के स्वरूप का वर्णन वाले गीतों को दिया है। भैरव राग की रागनियों 1. बंगाली 2. मधुमाधवी 3. बराड़ी 4. भैरवी और सैन्धवी ये सभी राग भैरव की पत्नीयाँ हैं। कौषिक राग के रागनियों के पाँच नाम है। टोडी खंभावति गौरी कुकुंमा तथा गुणकारी। इन पाँचों रागनियों के गुण के अनुसार विद्वान कौषिक राग को स्त्री बताया है। हिंडोल राग की रागिनीयों के पाँच नाम है–बेलावली, वेषाख, रामकली, ललिता तथा पंरमजरी।

इसमे प्रथम रागिनी बेलावली को कहा गया है। राग दीपक की रागिनी के पाँच नाम है–केदार, कान्हडा, देषी, कामोद तथा विहाग। इसमें प्रथम रागिनी केदार को कहा गया है। श्री राग के रागिनी के पाँच नाम है–बसंत, मालवा, मातश्री, धनाश्री तथा आसावरी है। इसकी रानी बसंत है जिन्हें सुनते ही शरीर के दुख दूर हो जाते है।

मेघ राग की रागिनी के पाँच नाम है– मलारी, देषीका, भूपाली, टंक तथा दक्षिण गुर्जरी है। इसमें प्रथम रागिनी मलारी है। इन्होंने गीत के प्रकार छंद गमक के प्रकार मार्गी ओर देषी संगीत के संबंध में भी लिखा है। गीत दो प्रकार के हैं।– 1. निबद्ध गीत 2. अनिबद्ध गीत वर्ण रत्नाकार ग्रंथ के व्यवस्था के अनुसार राजा को केंद्र में रखकर उससे संबंधित सभी विषयों पर लिखा गया है। लेखक इस ग्रंथ में दो शैली का प्रयोग किये है। वर्णात्मक परिणात्मक। वर्णात्मक के अन्तर्गत प्रभात वर्णन, ऋतु वर्णन आदि कुछ अंष में वर्णन है और परिगण दोनों है जैसे नृत्य वर्णन में कितनों में केवल परिगण की है जैसे 64 कला, 12 आदित्य।

प्रथ्य लेखक ने अपने अध्यायों का कल्लोल में बाँटा है जिसके प्रथम कल्लोल में नगर वर्णन किया गया है। इस अध्याय के दस पत्र लुप्त होने के कारण विद्वानों का ऐसी धारना है कि इस अंष में राजा–रानी का वर्णन किया गया है, और अंत में नगर तथा उसके किनारे बसने वाली नीच जातियों का वर्णन है। इसी अंष में राजदरबार, स्नान, पूजा, भोजन, पुनः भोजिन शयन आदि वर्णन है। इसके बाद भाट, मल्ल, विद्याक्त, नर्तक, चूँकि ये राजा के मनोरंजन एवं दरबार की शोभा है। इनके मनोरंजन के लिए रानीयाँ सुसज्जित होती एवं श्रृंगार करती।

वर्णरत्नाकार मैथिली सम्पादक, मिश्र प्रो. आनन्द प. झा गोविन्द मैथिली अकादमी पटना प्र. वर्ष 1990, पृ.सं.–11,12, ये सभी बाते वर्णित है।

द्वितीय कल्लोल इस अध्याय में लेखक ने नायक का वर्णन किया है जिनमे उनके प्रकार तथा लक्षणों का उल्लेख है। नायक से तात्पर्य राजा से है जो धनुर्वेदी की दोनो शैली (सूर्यवंष में प्रचलित एवं सोमवंष में प्रचलित) कुषल है। आठ उपसिद्धि तथा आठ प्रकृति सिद्धि तथा महासिद्धि में कुषल है। राजा तंत्र विद्या में दक्ष तथा छतीस प्रकार के आयुध चलाना जानते है।

राजा के वर्णन के बाद उनके षिष्ट (व्यक्तिगत सेवक का वर्णन है) चौरासी राजनीति में केवल उन्नीस कथा ही उपलब्ध है। यथा

अथ नायक वर्ण्णना।। दृढ़ दूर दुष्कर लम्बा लक्ष
(13ख) छिद्र छहु/गुणे सम्पूर्ण्ण सूर्यवंष सोमवंष दुओ में
धनुर्व्वेद ते कुषल अंजन गुटिका पादुका रस परस
खहु बेताल यक्षिणी आठहु ये उपसिद्धि तै समन्वित।
स्तम्भन मोहन वषीकरण उच्चाटव मारन विद्वेषकरण
प्रक्षोभण आकर्षण आठओ ये प्रकृत सिद्धि ताक कुषल अणिमा
महिमा गरिमा/लघिमा उषिद्ध वषिद्ध प्राकाम्य
कामावषायिता आठओ जे महासिद्धि तक पारग। षर
गल शक्ति सेल्स सय्यनपरिध परषु पाष/पट्टीष
खडग भुषण्डी भिन्दि पानादि ये छतीस पनायुथ ओदण्डायुद्ध
तंक कृताभ्यास/ अष्वषिक्षा गजषिक्षा स्त्रीचरीत्र सान्तन
ज्यो/तिष वैछक चूड़ामणि इन्द्रजाल आकर ज्ञान रत्नपरीक्षा
तीर्थत्रिक वीणावाद्य हरमेषला अष्ववन्ध गजवन्ध मृगवन्ध
मीनवन्ध लीनवन्ध चट।
(10 क) सीनता दुर्गरक्षा दुर्गप्रवेष व्यसन परीहार

तृतीय कल्लोल :– 'इस कल्लोल में लेखक ने राजा के आम दरबार का वर्णन किया है। दरबार में किस तरह के लोग पदाधिकारी सभासद रहते है, ''वैदेषिक'' विदेष से आये प्रतिनिधि राजपूत्र राजा के पुत्र नही राजदरबार का कोई सैनिक पदाधिकारी क पदनाम राजषिष्ट राजा के दरबारी लोग जैसे नगरपति नगर का मुखिया परिचारक, राजभवन का सेवक इस अध्याय में बाईस देषों का उल्लेख हुआ है, जिसमें डहाल, जरासिन्ध, वेषनावर आदि अनुसंधान स्वतंत्र अनुसंधान का विषय हैं।'

चतुर्थ कल्लोल :– 'इस अध्याय में बसंत वर्णन (वृक्ष का नूतन स्वरूप नये पल्लव का उगना, कोयल की कुक आदि), ग्रीष्मवर्णन (मिथिला के पोखरा का सूखना, सूर्य की बढ़ता प्रभाव, शीतल जल की कामना), वर्षा वर्णन(मेघ का गर्जना, अकाष में बिजली

का कौंधना, सर्पो की वृद्धि) शरद वर्णन, हेमन्त वर्णन, षिषिरवर्णन, षोडष महादान वर्णन, रत्न वर्णन, अधोपमान वर्णन, ज्योतित्विदंवर्णन, धुतवर्णन, कुट्टनीवर्णन, कामावस्थावर्णन, वस्त्रवर्णन के अन्तर्गत वस्त्रों के प्रकार, पटाम्बर, रेषमी, विभिन्न देषों के रेषमी वस्त्र आदि का उल्लेख है।' यथा

।।अथ वसन्तवर्ण्णना।। वृक्षक नूतनता/पल्लवक उद्‌गम
कुदुमक सम्भार मलयानिलक वेग कौकिलाक कलरव भ्रमरक
झंगार कन्दर्प्पक प्रभाव–विरहीनिक उत्कण्ठाना/यकक हरप
नायिकाक अभिलाष दिनकरक रम्यता षिषिएक अपगम
मधु(क) रक समृद्धि पूष्पक सौरभ पवनक अकांक्षा।
एवम्यि (ध) गुणविषिष्ट बसन्त देषु
।।अथ ग्रीष्मवर्ण्णना।। पाडरिक सौरभ कलक पाक
जलाषय संकोच दिनकरक महत्व रात्रिकई क्षी (33) खण्डता

पंचम कल्लोल इस अध्याय में लेखक ने युद्ध हेतु घोड़ा तैयार करना, इनके प्रकार, इनका लक्षण, प्रषिक्षण आदि प्रषिक्षण विधि, घोड़ा का निर्यातक देष आदि का वर्णन हुआ है सेना का स्वरूप, हाथी का महत्व, सेना में सैनिक के साथ, जानवर घोड़ा हाथी का स्थान रक्षादल आदि का वर्णन हुआ है।'

यथा ।।अथ प्रयानकवर्ण्णना। हरिह म अ मांगल कुही
कुबाल कओस, उरज नील गरूर पीअर राओट
दोरोञा उवाहव/ लिआह सेवाह कौंकाह केयाह
हराह पोराह रोरिह प्रभृति ये अनेक वालधोल से अनुअह से
कइसनाह तरूणाह नोनुञाह व।(43 क) लिआह शूराह
वाराह बहुमूल्य धसफल पूर परिधप वीषवेष वेग मण्डल
अर्द्धमण्डल, निग्रह आष्वास निकास प्रवेष वाम दक्षिण
बाग वाग/माट प्रभृत्ति अनेक अष्वषिक्षा प्रकार तका वतौर्व्वोह
नल शालिहोत्र ऋतुवर्ण्ण अरूण मतलि रेमन्त कुवलपाष।

षष्ट कल्लोल 'यह अध्याय विविध विद्या एवं कलाओ का ज्ञान रखनेवाली जाती 'भाँट' पर केन्द्रित है, आरंभ में इसे भाँट वर्णन कहा है। भाँट का स्वरूप साज, सज्जा परिधान, व्यक्तित्व आदि का उल्लेख हुआ है समाज के सभी वर्गो में उसका महत्व और सजा को प्रति स्वामी भक्ति आदि।

सप्तक कल्लोल इस अध्याय में लेखक ने शमषान वर्णन को आधार में लेकर विस्तार से तंत्र साधना कालि के रूप भैरव उनका स्वरूप तंत्र साधना की पीठ स्थली, कार्य प्रणाली में व्यवहार होनेवाली वस्तुए दुष्ट आत्मा, योगिनि, राक्षस, बेताल भूतप्रेत आदि का उल्लेख किया गया है। इनके अतिरिक्त मरूस्थल वर्णन, समुद्रवर्णन, तीर्थवर्णन, नदिवर्णन, अष्टादषमजनवर्णन अष्टादष पर्व वर्णन अष्टदस पुराण आदि का वर्णन किया गया है यथा

हुंकारिणी निरञना महामाया पूतना भूरूण्ठा/कुरूकुल्ला
जलनूनी सारमेया अन्तरीक्षा कुब्जिका अन्धरिधिका मूका
मोहिणि आकाष कामिनी, प्रकृति चउसठि योगिणीतै आकीर्ण्ण।।
अग्नि मुख उल्का मुख दरीमुख सूचीमुख तालजघ तम्रजघ
कुम्भीदर कुण्डीदर कोकिलाक्ष बारहो ये बेताल तैं अकीर्ण्ण
कड्यनाह बेताल्ह/कसारिका थाल पमरल अइसन मुह ओमारी
दीप लेसल अइसन आँषि पर्व्वत दावनल लागल अइसन केष।

अष्टम कल्लोल इस अध्याय में लेखक में तत्कालिक देष के विभिन्न राजाओ के कुल का वर्णन किया है। छतीस प्रकार के दण्डायुद्ध का वर्णन है, देषो का वर्णन, राज्य वर्णन, विवाह वर्णन इसके अन्तर्गत विवाह के प्रकार, द्वादष पुत्र वर्णन अष्टादष नायिका वर्णन, वाणिकपुत्र वर्णन, चौरवर्णन, दुर्गवर्णन नौकर वर्णन, वैधवर्णन, वोहितवर्णन, पुनलोजवर्णन के अन्तर्गत अलग–अलग विस्तार से उल्लेख किया गया है। यथा

।।अथ राजपूत्र कुलवर्ण्णना।। सोमवंष सूर्यवंष डीड चौउसि
चोल सेन पाल यादव पामार नन्द निकुम्भ पुष्पभूति
श्रृंगार आहनि गुपझर्ज्झर शुरू। कि षिषरब एकवार
गानहवार सुखवारमेद महर वट कुल कछवाह वएस।
करम्ब हेयाण छेवारक छुरियोज भोण्ड भीम वीन्ह
पुण्डिरियान चौहान छिन्द छीको (70 क) र चन्दल
चानुकि काञिचवाल रत्रजकउत मुण्डउत विकउत गुलहउत
चांगल छबेल, भटि मन्ददत्त सिहविर ब्रह्म पामार खाति
वएस रघुवंष पनिहार पूर/भञज गोसत गान्धार वर्द्धन
वछीम विषिष्ट वरआह गुटिअ भद्र खुरसान एव वहतरि राजकुलादि।

बौद्धकाल में मिथिला में भी अनेक परिवर्तन हुए। मुगलों के आक्रमण ने भी मिथिला को प्रभावित किया। रामराज्यवादि आश्रम ओर परिवर्तन में सबसे अधिक अस्म कला ओर संस्कृति पर पड़ता है। कर्णाट (1080 से 1324 ई.) तथा ओइववार वंष (1333 ई. से 1526 ई.) संस्कृत षिक्षा की प्रगति हुई।

पद्‌मनाभदत् ने ''सुपदम्'' नामक ग्रन्थ लिखकर व्याकरण की एक नवीन पद्धति का श्रीगणेष किया। दत्त मिश्र ने अलंकार तथा श्रृंगार शास्त्र पर ग्रंथों की रचनाए कि। रत्नेष्वर ने सरस्वती कण्ठभरण की व्याख्या लिखा। ज्योतिरीष्वर ने पंचसायक और रंगषेखर नाम से कामषास्त्र परक की रचना की। ओइनवार शासकों के काल में मिथिला में पूर्वकाल की तरह संस्कृत साहित्य के प्रकाण्ड विद्वानों की कमी रही

विद्यापति लिखित किर्तिलता, किर्तिपताका तथा मैथिली में पदावली आदि ऐसे साहित्य रत्न है जिसका प्रभाव बंगाल, उड़िसा, आसाम आदि प्रदेषों में हुआ। इसी काल अवधि में मीमांसा के अध्ययन में प्रगति हुई। (मध्यकालिन मिथिला में मीमांसा में ''भट्ट'' और प्रभाकर इन शाखाओ का विकास हुआ।) पद्‌मसिंह की रानी (पत्नी) विष्वास देवी के शासन काल में विद्धत्सभा का आयोजन किया गया था जिसमें चौदह सौ मीमांसक सम्मिलित हुए थे। मध्यकालिन मिथिला ओईनवार शासन के समय विष्वविद्यालय अध्यापन की अपनी स्वतंत्र पद्धति थी। मिथिलाधिपति नान्यदेव द्वारा लिखित 'भरत भाष्यम' जिसका मूलनाम सरस्वती हृदयालंकार है। नान्यदेव ने इस ग्रंथ में प्राचीन संगीत के साथ अर्वाचीन संगीत दोनो पर विचार किये हैं।

इन्होंने गंधार ग्राम का विस्तृत पष्चिम मूर्च्छना एवं प्रस्तर के संबंध को बताया है। नाट्य शास्त्र से पूर्व के संगीत ग्रंथों की अनुपलब्धता की स्थिति में नाट्य शास्त्र को ही आधार माना जाता। भरत भाष्य में गन्धार ग्राम का परिचय संगीत के छात्रो षिक्षकों और जिज्ञासुओ को ग्राम मूर्च्छना प्रणालि को और भी व्यापक रूप से समझाने का अवसर प्रदान करता है। वीणा भारतीय संगीत में वैदिक काल से लेकर वाद के आधुनिक समय तक प्रमुख वाद्य के रूप में उपयोगी रहे है। मानव ने स्वरो को सर्वप्रथम इसी वाद्य पर प्रत्यक्ष रूप से क्रमषः अनुभव किया था। आवष्यकतानुसार एकतंत्री वीणा से लेकर सततंत्री तथा इसके प्रकार बने।

नान्यदेव ने अपने समय में प्रचलित 161 रागो के नाम बताये है। वास्तव में भरत भाष्य नाट्य शास्त्र की व्याख्या के बदले मध्यकालीन समय में भारतीय संगीत की परिचित स्वरूप एवं स्थिति का मूल्याकंन के साथ एक दस्तावेज है। जिससे संगीत का सम्पूर्ण मूल्यांकन किया गया है। मध्यकालिन मिथिला में संगीत चिंतन की दृष्टी से ज्योतिरिष्वरकृत वर्णरत्नाकार का अपना महत्व है। इनका काल तेरहवीं ईसवी है। इस समय मिथिला के

राजा हरिसिंह देव ज्योतिरीष्वर संस्कृत के जानकार थे, पंडित थे, परन्तु कर्णरत्नाकार में अपभ्रन्स अवहट्ट मिश्रित भाषा की ज्योतिरीष्वर प्रगतिवादी थे। अवहट्ट मध्यकालीन मिथिला की समान्य लोगों की भाषा थी। ज्योतिरीष्वर ने वर्ण्रत्नाकार में मध्यकालीन मिथिला को समाजिक क्रियाकलापों, मान्यताओ, रीति–रिवाज, पूजा–पाठ, संगीतकला, नृत्य वाद्य आदि पर लिखा है। मिश्रित अवहट्ट जिसे आरभिंक मैथिली विद्वानों ने कहा है कि ज्योजिरीष्वर के समय तक यह भाषा अपने कलात्मक रूप से स्थापित हो चुकी थी। मैथिली भाषा के विकास के आरंभिक काल में ज्योतिरीष्वर का अमूल्य योगदान माना जाएगा। वर्ण रत्नाकार में भाषा का जितना सुंदर सुललित उपमा उपमेय के साथ अलंकरित शब्दों में वर्ण्य विषय व्यक्ति अथवा वस्तु की तुलना कि गई है जो अतुलनीय है। सामाजिक चित्रण के साथ ज्योतीरीष्वर ने संगीत विषय में लगभग सभी मुख्य बातों का उल्लेख किया है स्वर श्रुति वाद्य गान प्रकार नृत्य इसके प्रकार नाट्य आदि का उल्लेख किया है। वर्ण रत्नाकर का छठा अध्याय संगीत कला पर केन्द्रि है जिसे ग्रंथकार ने छठा कल्लोल कहा है इसका नाम उन्होंने भट्टकल्लोल कहा भट्ट संगीत कला जिवि जाती जिनका गान नृत्य नाट्य आदि अनुवार्षिक कार्य था। मध्यकाल में ये कला पर्याय माने जाते थे। राज दरबारों में इनकी उपस्थिति अनिवार्य मानी जाती थी। अपने आप में विषिष्ट आमजनों के लिए कौतुक इसिलिए वे छठा कल्लोल को भट्ट कल्ल्लो कहा है। भट्ट वर्णग्न के साथ विद्यावन्त वर्णन के अर्न्तगत संगीत का विस्तार से सुबद्ध व्याख्या है वर्ण रत्नाकर में वैदिककालिन सामगान के साथ जातीगान, प्रबंध संगीत के साथ राग संगीत शुद्ध राग सकीर्ण राग आदि लिखा है। गायक के गुण दोष गीत के गुण दोष पर प्रकाष डाला है। प्रबंध गीतों के भेद भाषा विभाषा अर्न्त भाषा आदि शारंगदेव कृत दषविधराग वर्गीकरण राग रागिनि वर्गीकरण छह पुरुष राग उनकी रागनियों के नाम गिनाये हैं। विद्यापति के पद रचनाकार के रूप में कवि भर ही है अथवा वे संगीतकार है मध्यकालिन मिथिला में जिस काल में इनका प्रार्दुभाव हुआ उस समय मिथिला सांगितिक दृष्टी से सम्पन्न था। विद्यापति ने सभी विषयोपर पद की रचनाएँ कि इनके पद सहज भाव से सम्प्रेषणीय है लयात्मक ऐसी है कि सामान्य व्यक्ति भी गाने लगे। विद्यापति की अवहट में रचित मिथिला में सुमित परम्परा की ध्रुपद गान का प्रचार था। इनके रचित गीत तत्कालीन दरबारी संगीतज्ञ गाते एवं उन पदों पर नृत्य भी किया जाता था। विद्यापति के पद एक ओर जहाँ राजप्रसादों में गुंजित थे वही आम जनों के बीच विभिन्न सामाजिक विवाहादि संस्कार भक्तिपद प्रचलित थे विद्यापति इन पदों को शास्त्रीय राग में निबद्ध कर गाते थे जिसे सामान्य लोग, उसे देषी राग (धुन) में गाते थे। डॉ0 चण्देष्वर झा ने लिखा है चण्डीदास एवं विद्यापति 14वीं 15वीं शताब्दी में कृष्ण कृतन पद्धति का श्रीगणेष किया था। जिसमें मंगल गीत एवं पदगीत की रचनाए हुई जो विभिन्न राग ताल, रस और भाव के साथ गायी जाती थी, कीर्तन प्रबंध गीत के अर्न्तगत एक निवद्ध गान का प्रकार है। इस तरह विद्यापकती का प्रभाव मिथिला में ही नहीं बंगाल तक था। विद्यापती के बाद मिथिला में कवि लोचन कृत राग तरंगणिएक महत्वपूर्ण कृति है। राग तरंगणि के रचना काल तक मिथिला में ईरानी संगीत का प्रभाव आ गया था, लोचन 'यमन' फिरोदस्त'' जैसी ईरानी रागों के नाम तरंगिणि में दिये है। लोचन ने राग रागनियों को व्यवस्थित करने के लिए जिस संस्थान पद्धति का आधार लिया था वास्तव में भारतीय संगीत में आये नवीन परिवर्तन में उन आधारों का महत्वपूर्ण स्थान था। आधुनिक युग के भारतीय संगीत के पुर्नउद्धारक पंडित विष्णु नारायण भरत खण्डे ने लिखा है उतर भारत में मुसलमान कालिन संगीत को सुत्रपात करने पर मूझे सर्वप्रथम लोचनकृत राग तरंगिणी ग्रंथ पर नजर पड़ी। लोचन ने तरंगिणी में राग तरंगिणी पद्धति के साथ नवीन शैली का भी संकेत किये जिऐ बाद में काव्य पद्धति कहा गया।

निष्कर्ष :–

प्राचीन काल से ही मिथिला में सभी विषयों के साथ संगीत पर गंभीर चिंतन होने के प्रमाण मिलते हैं। महर्षि याज्ञवल्क प्रचीन मिथिला के स्मृतिकार हुए। मिथिलाधिपति नान्यदेव द्वारा लिखित भरत भाष्यम जिसका मूल नाम सरस्वती ह्रदयालंकार है को राष्ट्रीय स्तर पर विषेष स्थान मिला। नान्यदेव ने इस ग्रंथ में प्राचीन संगीत के साथ अर्वाचीन संगीत दोनों पर विचार किए है। मिथिला में 'सुमित' परम्परा का ध्रुपद गान का प्रचार था। इनके रचित गीत तत्कालिन दरबारी संगीतज्ञ गाते एवं नृत्य भी किया जाता था। डा0 चण्डेष्वर झा ने लिखा है चण्डीदास एवं विद्यापती 14वीं, 15वीं शताब्दि में कृष्ण कृतन का श्रीगणेष किया लोचन ने राग रीगिनियों को व्यवस्थित करने के लिए जिस स्ंस्थान पद्धति का आधार लिया था वो भारतीय संगीत में आयें मूल नविन परिवर्तन में उन अधारों का महत्वपूर्ण स्थान था लोचन ने तरंगिणि में राग तरंगिनि पद्धति के साथ नवीन शैली का सर्कत किया जिसे बाद में काठ पद्धति कहा गया।

सन्दर्भ ग्रंथ की सूची

1. भारतीय संगीत का इतीहास–पारांजणे डा0 शरच्चन्द्र श्रीधर चौखम्बा, विद्याभवन, वाराणसी–2006ई0 पू0 –193
2. भरत भाष्यम, देसाई चैतन्य, पी देव, इन्दिराकला, संगीत विष्वविद्यालय खैरागढ़ वर्ष 1961ई0 पू0 –1931
3. प्राचीन भारत का कला विकास, द्विवेदी हजारी प्रसाद, पृ0–116, द्र0–मिथिलाक संगीत परम्परा का डा0 चण्देष्वर झा में अ0 पटना–172
4. मिथिलाक परम्परा संगीत परम्परा डा0 झा चण्डेष्वर, मैथिलि अकादमी, पटना, 1963, पृ0–198
5. उतर भारत का संक्षिप्त इतिहास–भारत खण्डे वी. एन. पृ0–10